इकाई 12 रसनिष्पत्ति–उत्पत्तिवाद, अनुमितिवाद, भुक्तिवाद, अभिव्यक्तिवाद

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 रसनिष्पत्ति

- 12.2.1 उत्पत्तिवाद
- 12.2.2 अनुमितिवाद
- 12.2.3 भुक्तिवाद
- 12.2.4 अभिव्यक्तिवाद

12.3 सारांश

12.4 शब्दावली

12.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

12.6 बोधा/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अधययन के पश्चात् आप–

- रस की निष्पत्ति शब्द से परिचित हो जायेंगे।
- रस की निष्पत्ति सिद्धांत उत्पत्तिवाद से परिचित हो जायेंगे।
- रस की निष्पत्ति सिद्धांत अनुमितिवाद से परिचित हो जायेंगे।
- रस की निष्पत्ति सिद्धांत भुक्तिवाद से परिचित हो जायेंगे।
- रस की निष्पत्ति सिद्धांत अभिव्यक्तिवाद से परिचित हो जायेंगे।
- रस निष्पत्ति में प्रयुक्त साहित्यिक शब्दावली से परिचित हो जायेगें।

12.1 प्रस्तावना

भरत के रससूत्र की व्याख्या मुख्यतः इन चार व्याख्याकारों ने की है। चारों व्याख्याकारों की व्याख्या को आचार्य मम्मट ने काव्यप्रकाश में उल्लेख किया है। मम्मट के अलावा चारों व्याख्याकारों की व्याख्या अभिनवगुप्त रचित भरत नाट्यशास्त्र की टीका अभिनवभारती में की गयी है। अभिनव भारती में यह व्याख्या लम्बी तथा कठिन है, परन्तु आचार्य मम्मट ने उसका संक्षिप्त रूप एवं सारांश प्रस्तुत किया है। इकाई–12 'रसनिष्पत्ति–उत्पत्तिवाद, अनुमितिवाद, भुक्तिवाद, अभिव्यक्तिवाद' के अन्तर्गत भट्टलोलट के 'उत्पत्तिवाद', शकुंक के 'अनुमितिवाद', भट्टनायक का 'भुक्तिवाद' और अभिनवगुप्त के 'अभिव्यक्तिवादसिद्धांत' की व्याख्या की गयी है।

12.2 रस निष्पत्ति

भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में '**विभावानुभाव व्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः**' नामक सूत्र के द्वारा रस की निष्पत्ति पर विचार किया है। इसका अर्थ है कि विभाव, अनुभाव

और संचारी व्यभिचारी भावों के द्वारा रस की निष्पत्ति या उत्पत्ति होती है। इस सूत्र में 'संयोग' और 'निष्पत्ति' शब्द के ऊपर विभिन्न आचार्यों द्वारा विभिन्न प्रकार के विचार व्यक्त किये गए हैं। इसके व्याख्याता चार प्रसिद्ध आचार्य भट्टलोल्लट, श्रीशंकुक, भट्टनायक और अभिनवगुप्तपादाचार्य हैं। इनके सिद्धान्तों को क्रमशः उत्पत्तिवाद, अनुमितिवाद, भुक्तिवाद एवं अभिव्यक्तिवाद कहा गया।

12.2.1 भट्टलोल्लट का उत्पत्तिवाद

भरतसूत्र के प्रथम व्याख्याता भट्टलोल्लट हैं। इनका समय नवीं शती का पूर्वार्द्ध है। इनका स्वरचित ग्रन्थ अद्यावधि उपलब्ध नहीं हो सका है किन्तु इनका रस सम्बन्धी मत अभिनव भारती, ध्वन्यालोक–लोचन एवं मम्मटकृत काव्यप्रकाश में पाया जाता है। भरत के प्रथम व्याख्याता होने के कारण इनके विचार में भरत के मत से अधिक साम्य है साथ ही इनके विवेचन में कतिपय नवीन संकेत भी हैं। भरत के रस–सूत्र को स्वीकार करते हुए भी इन्होंने उसका स्पष्टीकरण अपने ढंग से किया है।

भट्टलोल्लट मीमांसा सिद्धान्त के अनुयायी हैं। इनके अनुसार विभाव, अनुभाव आदि के संयोग से अनुकार्य रामादि में रस की उत्पत्ति होती है। विभाव रस के उत्पादक, अनुभाव उत्पन्न हुए रस का बोध कराने वाले तथा व्यभिचारी भाव उसके पोषक होते हैं। इसलिए स्थायीभाव के साथ विभावों का उत्पाद्य–उत्पादकभाव संबंध, अनुभावों का गम्य–गमक भाव संबंध एवं व्यभिचारियों का पोष्य–पोषक भाव संबंध होता है।

लोल्लट का मत अभिनव एवं मम्मट के माध्यम से ही उपलब्ध होता है किन्तु दोनों की उपस्थापन–दृष्टि में अन्तर आ गया है। अतएव इनका मत दो रूपों में उपस्थित होता है। रस संबंधी तीन सत्ताएँ दृष्टिगोचर होतीं हैं–एक अनुकार्य की दूसरी अनुकर्त्ता या अभिनेता की एवं तीसरी सामाजिक या दर्शक की। अभिनव के द्वारा प्रस्तुत मत से ज्ञात होता है कि लोल्लट ने रस की स्थिति अनुकार्य एवं अभिनेता दोनों में ही स्वीकार की है। आचार्य मम्मट ने काव्यप्रकाश में कहा है कि–विभाव अर्थात् ललना आदि आलम्बन और उद्यान आदि उद्दीपन कारणों द्वारा जो रति आदि भाव उत्पन्न होते हैं, अनुभाव अर्थात् कटाक्ष, भुज फड़कना आदि कार्यों से प्रतीति के योग्य किया जाता है, व्यभिचारी भाव अर्थात् निर्वेद आदि सहकारियों द्वारा पुष्ट उपचित किया जाता है और साक्षात् रूप से मुख्ययावृत्त्या अनुकार्य जिसका अनुकरण या अभिनय किया जाता है उस नायक में रहता है, किन्तु नर्त्तक नट में भी रामादि रूपता का अनुभव होने के कारण वह स्थायी उसमें भी प्रतीति होता है, वही रस है।

12.2.2 श्री शंकुक का अनुमितिवाद

श्री शंकुक के रस–सिद्धान्त को अनुमिति वाद कहा गया है। लोल्लट की भाँति इनका भी ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है एवं उसका उद्धरण अभिनवभारती, ध्वन्यालोक–लोचन एवं काव्य प्रकाश में है। इस सिद्धान्त में 'निष्पत्ति' शब्द का अर्थ है अनुमिति एवं संयोगात् का अर्थ अनुमाप्य–अनुमापक भाव। शंकुक के अनुसार रस की उत्पत्ति नहीं होती वरन् रस का अनुमान किया जाता है। इन्होंने सामाजिक के साथ रस के सम्बन्ध को दिखलाकर उसी में उसकी रस की स्थिति मानी है। सामाजिक अभिनेताओं को ही दुष्यन्त आदि मानकर नाटक के पात्रों के साथ उनकी अभिन्नता का अनुभव कर लेते हैं। सामाजिकों का यही अनुमानजन्य ज्ञान रसानुभूति का कारण बनता है काव्यप्रकाश में श्री शंकुक का मत इस प्रकार है–राम एवायम् अयमेव राम इति न रामोऽयमित्योत्तरकालिके बाधे रामोऽयमिति रामः स्याद्वा न वाऽयमिति रामसद्दशोऽयमिति

च सम्यङ्गमिथ्यासंशयसादृश्यप्रतीतिभ्यो विलक्षणया चित्रातुरगादिन्यायेन रामोऽयमिति प्रतिपत्त्या ग्राहये नटे इत्यादिकाव्यानुसन्धानबलाच्छिक्षाभ्यासनिर्वर्त्तितस्वकार्यप्रकटनेन च नटेनैव प्रकाशितैः कारणकार्यसहकारिभिः कृत्रिमैरपि तथाऽनभिमन्यमानैर्विभावादिशब्दव्यपदेश्यैः संयोगाद् गम्यगमकभावरूपाद्अनुमीयमानोऽपि वस्तुसौन्दर्यबलाद्रसनीयत्वेनानाप्यनुमीयमानविलक्षणः स्थायित्वेन सम्भाव्यमानो रत्यादिर्भावस्तत्रासन्नपि सामाजिकानां वासनया चर्व्यमाणो रस इति श्री शकुकः।

अर्थात् श्री शंकुक का मत है 'यह राम नहीं है' या 'यही राम है' इस प्रकार की इति सम्यक प्रतीति यह राम नहीं है, इस ज्ञान से बाद में औत्तरकालिक बाध हो जाने पर 'यह राम है' इस प्रकार की मिथ्या प्रतीति, 'यह राम है या नहीं' ऐसी संशय–प्रतीति तथा 'यह राम जैसा है' इस प्रकार की सादृश्य–प्रतीति इन चार प्रकार के ज्ञानों से विलक्षण प्रतीति द्वारा 'चित्रतुरगन्याय' से नट में 'यह राम है' ऐसी प्रतीति हो जाती है। 'सेयम्' इत्यादि संभोग शृंगार अथवा दैवात् इत्यादि विप्रलम्भ शृंगार अथवा अन्य रससम्बन्धी काव्य के अर्थ का साक्षात् अनुभव करने के कारण अनुसंधान बलात् और स्वयं नट के ही द्वारा शिक्षा एवं उसके अभ्यास से सम्पादित अपने नाट्यकर्म से प्रकाशित कारण, कार्य तथा सहकारी के द्वारा–जो कि कृत्रिम होते हुए भी वैसे नहीं समझे जाते–**'तथानभिमन्यमानैः कृत्रिमत्वेन अगृहीतैः'** और विभावादि नाम से कहे जाते हैं। व्याप्तिरूप सम्बन्ध से नट में सामाजिकों द्वारा रति आदि भाव अनुमीयमान होता है। और वह स्थायी रति भाव आदि अनुमित होते हुए भी अपने सौन्दर्य के कारण आस्वादयोग्य होने से अन्य अनुमीयमान वस्तु ;धूम द्वारा अग्नि आदि की अपेक्षा विलक्षण प्रकार का होता है, वह रति आदि भाव नट में न होता हुआ भी उसमें स्थित प्रतीत होती है तथा सामाजिकों की वासना द्वार आस्वाद्यमान होकर वही स्थायी रस कहलाता है।

12.2.3 भट्टनायक का भुक्तिवाद

भरत सूत्र या नाट्य शास्त्र के तीसरे व्याख्याता भट्टनायक हैं। जिन्होंने 'भुक्तिवाद' नामक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। इनका मन्तव्य भी पूर्ववर्ती आचार्यों की भाँति अभिनव–भारती, ध्वन्यालोकलोचन एवं काव्य–प्रकाश में बिखरा हुआ है। इनके रस–विवेचन का आधार 'सांख्यदर्शन' है। अतः ये सांख्यमतानुयायी आचार्य हैं। इन्होंने उत्पतिवाद, अनुमितिवाद एवं अभिव्यक्तिवाद का खण्डन कर अपने मत भुक्तिवाद की स्थापना की है। 'इनके मतानुसार विभावादिकों के द्वारा भोज्य–भोजक रूप सम्बन्ध से सामाजिकों को रस का भोग या आस्वादन होता है।' अतः यह मत रस भुक्तिवाद के नाम से विख्यात है–न ताटस्थ्येन नात्मगतत्वेन रसः प्रतीयते नोत्पद्यते नाभिव्यज्यते अपितु काव्ये नाट्ये चाभिधातो द्वितीयेन विभावादिसाधारणीकरणात्मना भावकत्वव्यापारेण भाव्यमानः स्थायी सत्त्वोद्रेकप्रकाशानन्दमयसंविद्विश्रान्तिसतत्त्वेन भोगेन भुज्यते इति भट्टनायकः। अर्थात् न तो तटस्थ अर्थात् उदासीन नट तथा नायक के संबन्ध से अर्थात् उसमें और न ही आत्मगत सामाजिक रूप से रस की प्रतीति होती है, न उत्पत्ति होती है, न अभिव्यक्ति होती है, अपितु काव्य या नाटक में अभिधा तथा लक्षणा से भिन्न द्वितीयेन एक भावकत्व नामक व्यापार होता है जिसका स्वरूप विभावादि का साधारणीकरण करना है, उसके द्वारा साधारणीकृत स्थायी भाव रत्यादि उस भोग आस्वाद या भोजकत्व व्यापार के द्वारा भोगा जाता है। सत्त्व के उद्रेक रज और तम को दबाकर उस पर उठने से होने वाली प्रकाशत्मिका तथा आनन्दात्मिका अनुभूति ही जिस भोग का स्वरूप है।

भरत का कहना है कि यदि यह माना जाय कि रस की निष्पत्ति अनुकार्यगत अर्थात् रामादिनिष्ठ हो या अनुकर्त्ता या नटनिष्ठ हो तो सामाजिक से सम्बद्ध नहीं होने के कारण उनके लिए निष्प्रयोजन है। इसी प्रकार रस की अभिव्यक्ति भी सम्भव नहीं क्योंकि पूर्वसिद्ध वस्तु की ही अभिव्यक्ति होती है। चूँकि रस अनुभूति है अतः अनुभव के पूर्व या पश्चात् उसकी सत्ता नहीं रहती। इन्होंने अभिनय से सम्बद्ध तीन व्यक्तियों में से सामाजिक में ही रस की प्रतीति स्वीकार की है। इसका कारण यह है कि नायक (अनुकार्य) एवं नट अनुकर्त्ता दोनों ही उदासीन या तटस्थ हैं। वस्तुतः रसास्वाद का विशेष सम्बन्ध प्रेक्षक या सामाजिक से ही होता है। रस की न तो उत्पत्ति होती है और न अनुमिति। भट्टलोल्लट आदि ने रस की उत्पत्ति मानी है किन्तु रामादि विभावों के वास्तविक नहीं होने के कारण उनके द्वारा रत्यादि की उत्पत्ति असम्भव है। इसी प्रकार रस की अनुमिति भी सम्भव नहीं है क्योंकि अभिनय काल में रामादि नायक विद्यमान नहीं रहते। कल्पित विभावादिकों के द्वारा नट में रति आदि की प्रतीति सम्भव नहीं है। अतः रस की उत्पत्ति, अनुमिति एवं अभिव्यक्ति का सिद्धान्त असंगत है।

अपने मत का व्याख्यान करते हुए भट्टनायक ने कहा है कि काव्य शब्द का व्यापार है और इस शब्दात्मक काव्य की तीन शक्तियाँ हैं जिनके द्वारा रस बोध होता है। वे अभिधा, भावकत्व और भोजकत्व हैं। इन्होंने अभिधा एवं लक्षणा से भिन्न भावकत्व या भावना व्यापार को विलक्षण शक्ति स्वीकार किया है। अभिधा के द्वारा काव्य के शाब्दिक अर्थ का ज्ञान होता है। अभिधा एवं लक्षणा द्वारा उपस्थित काव्य के अर्थ को भावकत्व व्यापार ही परिष्कृत कर सामाजिकों के लिए उपयोगी बना देता है। अभिधा द्वारा प्रस्तुत काव्यार्थ विशेष नायक एवं नायिका की प्रेम कहानी के रूप में उपस्थित होकर व्यक्ति विशेष से ही संबद्ध होता है। अतः इस रूप में उस प्रेमकथा को सामाजिक के लिए विशेष उपयोगी नहीं माना जा सकता। अतः शब्द के भावकत्व व्यापार के द्वारा वह विशेष सम्बन्ध दूर होकर साधारणीकृत हो जाता है। अर्थात् वहाँ सीता आदि नायिकाएँ अपने व्यक्तिगत सम्बन्ध से दूर हट कर सामान्य नायिका के रूप में उपस्थित हो जातीं हैं इसी प्रकार दुष्यन्त एवं शकुन्तला का प्रेम सामान्य दाम्पत्य प्रेम के रूप में झलकने लगता है। इसे ही साधारणीकरण कहते हैं। साधारणीकरण के बाद दर्शक या प्रेक्षक का सम्बन्ध उस कथा से स्थापित हो जाता है और वहाँ सामाजिक अपनी रुचि के अनुरूप अपने को उक्त कथा का पात्र समझ लेता हैं। इस अवस्था में '**अयं निजः परोवेति**' या अपने पराये का भाव या भेद मिट जाता है। यह किया भावना या भावकत्व व्यापार द्वारा ही सम्पन्न होती है।

भट्टनायक की तीसरी क्रिया भोग या भोजकत्व है। भोजकत्व का अर्थ है रजोगुण एवं तमोगुण को अभिभूत कर सतोगुण का प्रादुर्भाव। सतोगुण के प्रादुर्भाव से उत्पन्न आनन्दस्वरूप ज्ञान ही भोग है। अर्थात् आत्मानन्द में वह विश्राम, जिसके द्वारा हम रस का अनुभव करते हैं। भावना के प्रभाव से साधारणीकृत विभावादिकों से आनन्दित होने को ही भोग या योग व्यापार कहते हैं। यह आस्वादन या आनन्दानुभव अन्य सम्बन्धी ज्ञान से विरहित होने के कारण अलौकिक होता है–लौकिक सुखानुभव से विलक्षण होता है।

सतोगुण आनन्दमय एवं प्रकाशमय होता है। अतः उसके द्वारा आविर्भूत अनुभूति आनन्दपूर्ण एवं प्रकाशमयी होती है। इस आनन्द में वेद्यान्तर का संपर्क नहीं रहने पाता। इस प्रकार की आनन्दात्मिका संवित् ही रस का भोग है। साक्षात्कार है। अथवा इस प्रकार का भोजक व्यापार द्वारा रस का आस्वादन होता है।

भट्टनायक ने रस–सूत्र के 'निष्पत्ति' शब्द का अर्थ भोग किया एवं यह बतलाया कि विभावादि स्थायी भाव के भोजक हैं एवं स्थायी भाव भोज्य हैं। स्थायी भाव का भोग विभावादि के द्वारा ही होता है।

12.2.4 अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद

रस–सूत्र के चतुर्थ व्याख्याता 'अभिनवगुप्त' हैं। इनका रस–सम्बन्धी मत अभिनवभारती एवं ध्वन्यालोकलोचन में विस्तार के साथ उल्लिखित है। आचार्य मम्मट ने इनके सार को काव्य–प्रकाश में प्रस्तुत किया है। अभिनवगुप्त रस–सूत्र के सर्वश्रेष्ठ व्याख्याकार हैं। परवर्ती आचार्यों ने इन्हीं की व्याख्या को स्वीकार किया है। इन्होंने पूर्ववर्ती आचार्यों के मत को पूर्व पक्ष के रूप में उपस्थित कर, तत्पश्चात् उनका सम्यक् परीक्षण किया है एवं उनके मतों की त्रुटियों को बतलाकर अन्ततः स्वमत की प्रस्थापना की है। उनका कहना है कि उन्होंने पूर्ववर्ती विचारकों के मत का खण्डन न कर केवल संशोधन किया है–'**पूर्वप्रतिष्ठापितयोजनासु मूलप्रतिष्ठापफलमामनन्ति।**' वे एक युगप्रवर्तक काव्यशास्त्रीय चिन्तक ही नहीं, एक महान् दार्शनिक या तत्त्व चिन्तक भी थे। उत्पलाचार्य के प्रत्यभिज्ञासिद्धान्त को उन्होंने दार्शनिक रूप देकर उसे गौरवान्वित किया है। इनके रस–विवेचन की दार्शनिक पीठिका शैवाद्वैतवाद की है।

आचार्य मम्मट ने काव्यप्रकाश में अभिनवगुप्त के मत को उद्धृत इस प्रकार किया है–लोके प्रमदादिभिः स्थाय्यनुमानेऽभ्यासपाटववतां काव्ये नाट्ये च तैरेव कारणत्वादिपरिहारेण विभावनादिव्यापारवत्त्ववदलौकिकविभावादिशब्दव्यवहार्य्यैर्ममैवैते, शत्रोरेवैते, तटस्थस्यैवैते, न ममैवैते, न शत्रोरेवैते, न तटस्थस्यैवैते, इति सम्बन्धविशेषस्वीकारपरिहारनियमानध्यवसायात् साधारण्येन प्रतीतैरभिव्यक्तः सामाजिकानां वासनात्मतया स्थितः स्थायी रत्यादिको, नियतप्रमातृगत्वेन स्थितोऽपि साधारणोपायबलात्तत्कालविगलितपरिमितप्रमातृभाववशोन्मिषितवेद्यान्तरसंपर्कशून्यापरिमित भावेन प्रमात्रा सकलहृदयसंवादभाजा साधारण्येन स्वीकार इवाभिन्नोऽपि गोचरीकृतश्चर्व्यमाणतैकप्रमाणो विभावादि जीवितावधिः पानकरसन्यायेन चर्व्यमाणः पुर इव परिस्फुरन्, हृदयमिव प्रविशन् सर्वाङ्गीणमिवालिङ्गन् अन्यत्सर्वमिव तिरोदधत्, ब्रह्मास्वादमिवानुभावयन् अलौकिकचमत्कारकारी श्रृंगारादिको रसः। अर्थात् लोक में प्रमदा आदि अर्थात् प्रमदा, उद्यान, कटाक्ष आदि विभाव, अनुभावादि के देखने से उन प्रमदादि में रहने वाले रति आदि रूप स्थायी भावो के अनुमान करने में निपुण सहृदयों का, काव्य तथा नाटक में कारणत्व कार्यत्व तथा सहकारित्व आदि को छोड़कर विभावन आदि व्यापार **'रत्यादीनामास्वादयोग्यतानयनरूपाविर्भावनं विभावन्।'** अर्थात् रत्यादि को आस्वादयोग्य रूप प्रदान करना 'विभावनव्यापार' कहलाता है। आदि पद से 'अनुभावन' तथा 'व्यभिचारण' व्यापार का भी संग्रह होता है। इस प्रकार के आस्वाद–योग्य रत्यादि को अनुभव का विषय बनाना 'अनुभावन' तथा शरीर में रति आदि के प्रभाव का संचारण व्यभिचारण व्यापार से युक्त होने से विभावादि शब्दों से व्यवहार्य उन्हीं प्रमदादि रूप कारण, कार्य, सहकारियों से जो 'वे मेरे ही हैं' या 'शत्रु के ही हैं' या 'तटस्थ के ही हैं' अथवा 'ये न मेरे ही हैं' 'न शत्रु के ही हैं' और 'न तरस्थ के ही हैं' इस प्रकार के सम्बन्ध विशेष को स्वीकार अथवा परिहार करने के नियम का निश्चय न होने से, साधारण अर्थात् विशेष व्यक्ति के सम्बन्ध से रहित रूप से प्रतीत होने वाले उन विभावादि से ही अभिव्यक्त होने वाला और सामाजिकों में वासना रूप से विद्यमान रति आदि स्थायी भाव नियत प्रमाता अर्थात् विशिष्ट एक सामाजिक में स्थित होने पर भी, साधारणोपाय अर्थात् व्यक्ति विशेष के सम्बन्ध के बिना प्रतीत होने वाले विभावादि के बल से उसी रसानुभव काल में मै ही इसका आस्वादनकर्ता हूँ, या

ये विभावादि मेरे ही हैं' इस प्रकार के व्यक्तिगत भावनाओं रूप परिमित प्रमातृभाव के नष्ट हो जाने से वेद्यान्तर के सम्पर्क से शून्य और अपरिमित प्रमातृभाव जिसमें उदित हो गया है इस प्रकार के प्रमाता सामाजिक के द्वारा, समस्त सामाजिकों हृदयों के साथ सामान रूप से व्यक्ति–विशेष सम्बन्ध से रहित साधारण से अपनी आत्मा के समान आस्वाद से अभिन्न होने पर भी, आस्वाद का विषय होकर, अर्थात् जैसे आत्मसाक्षात्कार में चिद्रूप से अभिन्न आत्मा को भी साक्षात्कार का 'विषय' माना जाता है। इसी प्रकार रसानुभूति में अनुभूति से अभिन्न होने पर भी रस को 'विषय' कहा जा सकता है, आस्वाद मात्रा स्वरूप चर्व्यमाणतैकपाणः विभावादि की स्थिति पर्यन्त ही रहने वाला, इलायची, काली मिर्च, शकर, इमली, आम आदि को मिलाकर तैयार किये गये प्रपाणक अर्थात् पने के रस के सामान अर्थात् प्रपाणक की घटक सामग्री के रस से विलक्षण रस के समान आस्वाद्यमान, साक्षात् प्रतीत होता हुआ सा, हृदय में प्रविष्ट होता हुआ सा, ब्रह्मसाक्षात्कार का अनुभव करता हुआ सा अलौकिक आनन्द को प्रदान करने वाला चमत्कारी श्रृंगार आदि 'रस' होता है–

1. इस प्रकार कहा जा सकता है कि–अभिनव गुप्त ने रस को व्यंग्य मान कर व्यंजना का विषय स्वीकार किया है। काव्य की अनुभूति न तो अभिधा का विषय है और न लक्षणा का ही। वह तो मात्र व्यंग्य ही हो सकता है। इनके मत से सभी व्यक्ति रसास्वाद के अधिकारी नहीं हैं केवल विमलप्रतिभाशाली व्यक्ति को ही रसानुभूति होती है। इन्होंने रस को अलौकिक माना है। अभिनव के अनुसार सामाजिकों के हृदय में रत्यादि स्थायीभाव वासना रूप से वर्तमान रहते हैं। जिनके हृदय का यह संस्कार जितना ही अधिक जागरूक होता है वे उतना ही अधिक रस का आस्वादन करने में समर्थ होते हैं। नष्ट संस्कार व्यक्ति को रसास्वादन नहीं प्राप्त होता है। वासना रूप से स्थित स्थायी भाव ही विभावादिकों के संयोग से व्यंजनावृत्ति के विभावन व्यापार के द्वारा अभिव्यक्त होकर रस रूप से परिणत होते हैं। अर्थात् सहृदयों के हृदय में संस्कार रूप से स्थित स्थायी भाव काव्य के पढ़ने अथवा नाटक के देखने से उद्‌बुद्ध होकर रस के रूप में प्रकट होते हैं। सामान्यावस्था में ये भाव दबे रहते हैं किन्तु अनुकूल अवसर के प्राप्त होते ही इनकी उद्‌बुद्धि होती है। इस प्रकार अभिनव के मत से 'संयोग' का अर्थ भरत रससूत्र में निहित संयोग एवं निष्पत्ति प्रकाश्य–प्रकाशक या व्यंग्य–व्यंजक भाव संबंध है तथा निष्पत्ति से आशय है अभिव्यक्ति का।

2. अभिनवगुप्त ने भट्‌टनायक के साधारणीकरण को माना है किन्तु उसे संशोधित रूप में ही स्वीकार किया है। उनके अनुसार साधारणीकरण व्यंजना का व्यापार है भावना का नहीं जैसा कि भट्‌ट नायक का मत है काव्यगत इसी अभिव्यंजना शक्ति के द्वारा ही विभादिकों का साधारणीकरण होता है। अभिनव के अनुसार रस का संबंध सामाजिकों के ही भावों से है। इन्होंने सामाजिक या प्रेक्षक में ही रस की स्थिति मानी है।

3. इन्होंने वासनागत संस्कारों को ही स्थायी भाव कहा है। वासना के विद्यमान होने पर भी सहृदय के लिए आवश्यक है कि वह काव्यानुशीलन का अभ्यास करे। रसास्वाद के लिये लौकिक अनुभव, विमलप्रतिभाशालिहृदय तथा वीतविघ्नता की अत्यन्त आवश्यकता है। अर्थात् रसास्वादन के मार्ग में आने वाले विघ्नों या बाधाओं का उन्मूलन अनिवार्य तथ्य है। रस तो वीतविघ्नप्रतीति ही है। इसके अभाव में रसास्वाद की कल्पना संभव नहीं– **'सर्वथा रसनात्मक वीतविघ्नप्रतीतिग्राह्यो भाव एव रसः।'**

बोध प्रश्न–1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइये

   I. रसनिष्पत्ति सिद्धांत की व्याख्या कितने विद्वानों ने की है? (दो/चार)

   II. अभिनवगुप्त के सिद्धांत को क्या कहा जाता है? (अभिव्यक्तिवाद /उत्पत्तिवाद)

   III. भट्टलोल्लट का उत्पत्तिवाद किससे प्रभावित है? (मीमांसा/न्याय)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   I. अभिनवगुप्त का .....किससे प्रभावित है? (ध्वनिवादी आचार्य आनन्दवर्धन/दण्डी)

   II. भट्टनायक का सिद्धांत .....कहलाता है? (भुक्तिवाद/अभिव्यक्तिवाद)

बोध प्रश्न–2

I. भट्टलोल्लट के उत्पत्तिवाद को स्पष्ट कीजिए?

.....

.....

2. शंकुक के अनुमितिवाद को स्पष्ट कीजिए?

.....

.....

अभ्यास प्रश्न 1

1. रसनिष्पत्ति विषयक सिद्धांतों को स्पष्ट कीजिए।

12.3 सारांश

इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

काव्य रस का सविध एवं सांगोपांग निरूपण सर्वप्रथम आचार्य भरत ने नाट्यशास्त्र के छठे अध्याय में किया है। नाट्यशास्त्र की रचना नाट्य के रंगमंच पर प्रयोग को ध्यान में रखकर की गई है। नाट्यशास्त्र के षष्ठ एवं सप्तम अध्यायों में रस एवं भावों की विस्तारपूर्वक मीमांसा हुई है। भरत के रससूत्र के व्याख्याकार भट्टलोलट श्री शंकुक तथा भट्टनायक तीनों से ही अभिनवगुप्त की व्याख्या सर्वोत्तम है तथा आचार्य मम्मट ने बड़े ही सुन्दर ढंग से अभिनव भारती के जटिल एवं विवेचना को संक्षिप्त एवं अपेक्षाकृत सरलीकृत करने का प्रयत्न किया है और समन्वयवादी मत के पोषक आचार्य मम्मट को इसमें काफी सफलता मिली है। वस्तुतः अभिनवगुप्तपादाचार्य द्वारा वर्णित काव्यप्रकाशकार का सिद्धांत पक्ष है। विभावादि से स्थायी भाव की अभिव्यक्ति के अभिनवगुप्त शब्द में व्यंजनावृत्ति स्वीकार करते हैं, जो उनके पूर्ववर्ती आनन्दवर्धन द्वारा प्रतिपादित हो चुकी है। रसानुभूति को अभिनवगुप्त एक अलौकिक अनुभूति मानते हैं। रसानुभूति की अवस्था वेदांतर सम्पर्क शून्यता की स्थिति होती है।

12.4 शब्दावली

उत्पाद्य–उत्पादक संबंध – रस निष्पत्ति की प्रक्रिया में विभाव से स्थायी भाव का संबंध उत्पाद्य–उत्पादक संबंध कहा गया है।

पोष्य–पोषक–संबंध – संचारी भाव स्थायी भाव की पुष्टि करते हैं। अतः रस प्रक्रिया में स्थायी तथा संचारी भाव का संबंध पोष्य–पोषक संबंध कहलाता है।

भावकत्व – अपने पराये की भेद बुद्धि से मुक्त हो जाना

व्यंग्य–व्यंजक–संबंध – विभावादि व्यंजक है और रस रूप में पर्णित स्थायी भाव व्यंग्य हैं अतः अभिनवगुप्त ने निष्पत्ति का अर्थ किया अभिव्यक्ति और संयोग का अर्थ किया व्यंग्य व्यंजक संबंध। व्यंग्य का आधार व्यंजना शक्ति है।

12.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- अग्निपुराण, अग्निपुराणकार, बलदेव उपाध्याय, चौखम्भा सीरीज, वाराणसी, 1966
- अभिनवभारती के तीन अध्याय, अभिनवगुप्त, सम्पादक नगेन्द्र, हिन्दी विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- काव्यप्रकाश, मम्मट सम्पादक एवं व्याख्या, विश्वेश्वर सिद्धांत शिरोमणि, ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी 1988
- नाट्यशास्त्र, भरतमुनि सम्पादक एवं व्याख्या, बटुक नाथ शर्मा एवं बलदेव उपाध्याय चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1980
- वाक्यपदीय, भर्तृहरि, सम्पादक के. एस अय्यर, भण्डाकर रिसर्च सेन्टर, पूना, 1963
- रससिद्धांत आक्षेप और समाधान, सुन्दर लाल कथूरिया, आदर्श साहित्य प्रकाशन, 1972
- संस्कृत शास्त्रों का इतिहास, पी.वी काणे, मोतीलाल बनारसी दास वाराणसी,
- संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास, पी.वी. काणे, अनुवादक इन्द्रचन्द्र शास्त्री, मोतीलाल बनारसी दास, बनारसी, प्रथम संस्करण
- संस्कृत काव्यशास्त्र में लक्षणा का उद्भव एवं विकास, ठाकुर दत्त जोशी, राजस्थानी ग्रन्थालय, जोधपुर, जनवरी 1986
- अलंकार शास्त्र का इतिहास, कृष्णकुमार, साहित्य भण्डार मेरठ
- काव्यशास्त्र एवं साहित्यिक समालोचना सुबोध, डॉ. देशराज, अमरपब्लिकेशन, दिल्ली

12.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. (i) चार (ii) अभिव्यक्तिवाद (iii) उत्तरमीमांसा
2. **(i)** ध्वनिवादी आचार्य आनन्दवर्धन **(ii)** भुक्तिवाद

बोध प्रश्न–2

1 भट्टलोल्लट मीमांसा सिद्धान्त के अनुयायी हैं। इनके अनुसार विभाव, अनुभाव आदि के संयोग से अनुकार्य रामादि में रस की उत्पत्ति होती है। विभाव रस के उत्पादक, अनुभाव उत्पन्न हुए रस का बोध कराने वाले तथा व्यभिचारी भाव उसके पोषक होते हैं। इसलिए स्थायीभाव के साथ विभावों का उत्पाद्य–उत्पादकभाव संबंध, अनुभावों का गम्य–गमक भाव संबंध एवं व्यभिचारियों का पोष्य–पोषक भाव संबंध होता है।

2 श्री शंकुक के रस–सिद्धान्त को अनुमितिवाद कहा गया है। लोल्लट की भाँति इनका भी ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है एवं उसका उद्धरण अभिनवभारती, ध्वन्यालोक–लोचन एवं काव्य प्रकाश में है। इस सिद्धान्त में 'निष्पत्ति' शब्द का अर्थ है अनुमिति एवं संयोगात् का अर्थ अनुमाप्य–अनुमापक भाव है। शंकुक के अनुसार रस की उत्पत्ति नहीं होती वरन् रस का अनुमान किया जाता है। इन्होंने सामाजिक के साथ रस के सम्बन्ध को दिखलाकर उसी में उसकी रस की स्थिति मानी है। सामाजिक अभिनेताओं को ही दुष्यन्त आदि मानकर नाटक के पात्रों के साथ उनकी अभिन्नता का अनुभव कर लेते हैं। सामाजिकों का यही अनुमानजन्य ज्ञान रसानुभूति का कारण बनता है

अभ्यास प्रश्न–

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY